भगवत् कृपा

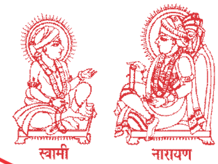

THE DIVINE GRACE

महाप्रभु स्वामिनारायण प्रणीत सनातन, सचेतन और सक्रिय गुणातीतज्ञान का अनुशीलन करने वाली मासिक सत्संगपत्रिका

वर्ष-2, अंक-1	सम्पादक : साधु मुकुंदजीवनदास गुरु ज्ञानजीवनदासजी	वार्षिक चन्दा-15.00
बुधवार, 12 जन.' 78	मानद सहसम्पादक: श्री महेन्द्र दवे-श्री विमल दवे	प्रति अंक : 1.25

कृपावतार स्वामिश्री सहजानंदजी

सहजानंदस्वामी के धर्मचक्र का प्रवर्तन

सहजानंदस्वामी के असाधारण प्रभाव के कारण दिनप्रतिदिन उनके शिष्यों की संख्या निरंतर तेज गति से बढ़ती रही। समुद्र के ज्वार के समान नये नये लोग घर परिवार का साथ-संग छोड़कर महाराज के चरणों में अपना सारा जीवन समर्पित कर के साधु बनने लगे। वास्तव में इतना महान त्याग एक प्रकार की वीरता है। यह वीरता के प्रेरक थे सहजानंदस्वामी–जो असाधारण सामर्थ्यवान थे, उनकी शक्ति और आकर्षण की सीमा नहीं थी। वास्ताव में ये अनेक जीवों के प्राणाधार थे। उनके सान्निध्य में परम शांति, आनंद, दिव्यता प्राप्त होते थे। परिणाम स्वरूप अनेकानेक व्यक्ति साधु का जीवन स्वीकार कर इनका आश्रय लेते थे। अनेक पुत्रों ने माताओं का त्याग किया, अनेक मनुष्यों ने पत्नियों का त्याग किया, अनेक पिताओं ने बच्चों का त्याग किया, गृहस्थी ने गृह छोड़ा, धनवान ने धन छोड़ा ताकि वे सहजानंद के समागम में रह कर, साधु बन कर सहजानंद को प्राप्त कर सकें। सहजानंद स्वामी का साधु परिवार विस्तृत हो गया।

इसके अतिरिक्त सहजानंदस्वामी की प्रेरणा द्वारा संचालित अन्नक्षेत्रों में द्वारका की यात्रा करने के लिए आने वाले अनेक साधु, संन्यासी भोजन प्राप्त करके तृप्त होकर सहज कौतूहलवश पूछते थे–'यह किसका अन्नक्षेत्र है?' उत्तर मिलता था–'स्वामिनारायण भगवान का।' यह उत्तर सुन कर उनके मन में महाराज के दर्शन करने की इच्छा स्वाभाविक ही जागृत होती थी और वे सहजानंदस्वामी के संपर्क में आते थे। उस समय इनके दिव्य स्वरूप से वे सहज ही आकृष्ट हो जाते थे और सर्वदा के लिए उनके आश्रय में ही रह जाते थे। इस प्रकार अनेकों ने अपनी मंडलियां बिखेर दी। अपने अलग-अलग संप्रदाय छोड़ दिये और अपने शिष्यों के साथ महाराज के शिष्य साधु बन गये। इस प्रकार जिन्होंने महाराज का आश्रय लिया, उनमें प्रमुख थे– 'स्वरूपानंदस्वामी, आनंदानंदस्वामी, व्यापकानंदस्वामी, महानुभावानंदस्वामी, जिज्ञासानंदस्वामी,

नित्यानंदस्वमी, शतानंदमुनि आदि।' इनमें बहुत तो ऊंची कोटि के संत, दार्शनिक, प्रतिभा सम्पन्न विद्वान, अद्वैतमत के प्रचंड प्रचारक आदि थे।

सहजानंदस्वामी अभी-अभी जिन्होंने किशोरावस्था से यौवन में प्रवेश किया था–के प्रभाव से प्रभावित होकर उनके दिव्य स्वरूप से आकृष्ट होकर इस प्रकार इतने बड़े-बड़े लोग इनके चण कमल में झुक जाते थे, इतना ही नहीं अपना सर्वस्व समर्पित कर देते थे..... सहजानंदस्वामी के धर्मचक्र का साम्राज्य ही मानो प्रवर्त रहा था।

परिणाम यह हुआ कि धर्म के नाम से व्यापार करने वाले साधु और महन्त अपनी मानहानी महसूस करने लगे। अनेक सम्प्रदाय क्षीण हो गये और उन लोगों में विद्वेष का भाव जागृत हुआ।

संत–असंत लक्षण

एक और स्वामिनारायण संप्रदाय के साधुओं का उच्च, त्यागमय, धार्मिक, भक्ति निष्ठ, सेवायुक्त जीवन था, दूसरी ओर ये लोग थे जो सब दुर्गुणों से सम्पन्न थे, व्यसनों में व्यस्त थे। वे शस्त्रों से सुसज्जित रहते थे। मौका मिले तो तलवार बाजी भी कर लेते थे। स्त्रियों को उठा ले जाते थे और कभी-कभी उनको राजगृह या श्रीमंतों के गृहों में बेच भी देते थे। लोगों की अंधश्रद्धा और वहम पर ये साधु पलते थे। किन्तु अब लोगों की आंखें खुल गई थीं। इन्होंने देखा कि स्वामिनारायण के साधु चारित्र्यशील, अनुशासनपूर्ण, वैराग्यमय और त्यागमय थे। इस प्रकार के इनके निर्मल व्यवहार से और स्वामी सहजानंदजी के सदुपदेश से अंधश्रद्धा टूटने लगी। परिणाम स्वरूप दंभी साधुओं के मन में भयंकर रोष हुआ। इन्होंने सोचा कि अब हमारी रोटी का क्या होगा?

अतः वे कहने लगे कि सहजानंदस्वामी– जिसे लोग 'जीवनमुक्त' कहते हैं वह तो एक बड़ा जादूगर है, वह तो मायावी है, इंद्रजाल दिखा कर लोगों को फंसाते हैं और हमारे शिष्यों को ऐसी विद्या से अपनी ओर खींच लेते हैं। इतना करके ही ये लोग नहीं रुके। अन्नक्षेत्रों का अन्न लूटना, स्वामिनारायण के साधुओं को त्रास देना इत्यादि प्रवृत्तियां प्रारंभ कर दी। वे स्वामिनारायण के साधुओं का मजाक उड़ाते थे, उनको मारते थे, उनकी शिखाएं खींचते थे, यज्ञोपवीत तोड़ देते थे और उनके इष्टदेव की मूर्तिआं–जिनकी वे पूजा करते थे उसको नष्ट करते थे। इन सच्चे साधुओं के चारों ओर व्यभिचारिणी स्त्रियों की भीड़ जमा कर देते थे। साधुओं की भिक्षा में विष डाल देते थे। किन्तु स्वामिनारायण के साधुओं ने ये सब प्रेमपूर्वक सहन कर लिया, क्योंकि वे तो सहजानंदस्वामी की सच्चाई, दिव्यता, परम विभूतितत्व, प्रभुत्व आदि से सुपरिचित थे। उन्हें स्पष्ट था कि हमने सामान्य गुरु का नहीं किन्तु साक्षात् परमात्मा का आश्रय लिया है, इतना ही नहीं, हमारे गुरु की शिक्षा उच्च कोटि की है और हमें सच्ची साधुता प्रदान करने वाली है। अतः पाखंडी कितना भी अत्याचार करें वे झुकते भी नहीं थे और क्रोध भी नहीं करते थे। वे सर्वथा क्षमाशील रहते थे। सहजानंदस्वामी की आज्ञा थी कि जो तुमको अपना वैरी मानते हैं उनको भी क्षमा देनी चाहिए। क्षमा साधुता का एक अंग है। महाराज ने 'शिक्षापत्री' में लिखा है–

गालिदानं ताडनं च कृतं कुमतिभिर्जनैः।
क्षन्तव्यमेव सर्वेषां चिन्तनीयं हितं च वै॥

अर्थात् दुर्जनों की दी हुई गाली तथा उससे की हुई अपना ताड़ना को साधु और नैष्ठिक

ब्रह्मचारी सर्वदा सहन करें, उन्हें क्षमा करें इतना ही नहीं किन्तु उनका हित हो ऐसी मन में प्रार्थना करें।

किन्तु इसका अर्थ यह भी नहीं था कि इन पाखंडियों से डर कर सद्धर्म प्रचार नहीं करना चाहिए। साधुओं का धर्मचक्र प्रवर्तन निरंतर चलता ही रहा और–

माणकीए चढया रे मोहन वनमाली.....

अर्थात्-माणकी घोड़ी पर सवार हुए हैं अर्थात् परमात्मा मोहन वनमाली–

–यह प्रेरक संघगान गाती असाधारण 'मिशनरी स्पिरिट' से संतमंडली सौराष्ट्र और गुजरात के गांव-गांव में घूमती रही। लोगों में गूंजने लगा इनका त्याग, इनकी तपश्चर्या, इनकी साधुता की शांत दीप्ति और ये सद्गुण स्वयं उनके जय की पताका बन गई। इन साधुश्रेष्ठों के जीवन और कृतित्व के अध्येता गुजरात के महाकवि न्हानालाल ने उन्हें 'साधुसार्दूल' कहा है यह सम्पूर्णतया सुयोग्य है।

– क्रमशः

❋ ❋ ❋

3 फरवरी
स्वरूपानुभूति दिन

साधक की तीव्र अभीप्सा और अप्रतीम श्रद्धा जब परमात्मा की सार्वभौम सत्ता के अस्तित्व में एकत्व प्राप्त करती है तब उसको परमात्मा के मिलन के भिन्न-भिन्न प्रकार के अनुभव और साक्षात्कार होते रहते हैं। प्रकट परमात्मा की असीम कृपा और प्रेम का यह फल है। जब साधक सच्चे प्रत्यक्ष सद्गुरु द्वारा ऐसी कृपासमाधि का पात्र बनता है तब देह के रहते हुए भी उसको परम चेतना की अनुभूति होती है। इसके परिणामस्वरूप साधक को प्रमुखतः चार प्रकार के साक्षात्कार होते हैं। आध्यात्मिक विकास की परिभाषा में इस साक्षात्कार की 'रहस्यानुभूति'– Mystical experience – कहा जाता है। अन्य लोग इस साक्षात्कार को Occult experiences भी कहते हैं। यद्यपि सत्यनिष्ठा पर आधारित सत्यशोधकों के ऐसे अनुभवों का वर्णन मूलतः समान होता है। उदाहरणार्थ–

1. प्रकाश का ऊर्ध्वगमन के मानसिक और आध्यात्मिक अनुभव,
2. सविकल्प समाधि के राजयोग के कुंडलिनी की जागृति के अष्टांग योग के भिन्न-भिन्न अनुभव और
3. निर्विकल्प समाधि के अनुभव, जिनको अंग्रेजी में attributeless pure consciousness भी कहते हैं।

रामकृष्ण परमहंसदेव, श्री रमणमहर्षि, श्री स्वामी रामदास जैसे महान सन्त लोग एवं तुकाराम ज्ञानेश्वर और स्वामिनारायण संप्रदाय के गोपालानंदस्वामी, स्वरूपानंदस्वामी आदि को इस प्रकार के आध्यात्मिक अनुभव हुए थे। इतिहास इस तथ्य की गवाही देता है। इनके द्वारा किये गये शक्तिपात से या इनके समागम से स्वामी विवेकानंद, स्वामी रामतीर्थ जैसे को प्रेमावेश में या चेतना की संपूर्ण जागृति में ऐसे दिव्य अनुभव हुए थे यह भी सब जानते हैं। जिसकी जिस प्रकार की साधना और जिस प्रकार के समर्थ सद्गुरु का सम्पर्क और सत्संग वैसी उसके चैतन्य के विकास की आध्यात्मिक भूमिका या अवस्था होती है। इस अवस्था को ब्राह्मीस्थिति भी मानी जाती है। ऐसे आध्यात्मिक योगी सिद्धदशा को प्राप्त करते हैं अतः सिद्धयोगी भी कहे जाते हैं। यह चमत्कार नहीं है, किन्तु साधक

की साधना के परिणामस्वरूप परमात्मा की कृपा से हुआ वासना का क्षय और प्रकृति का रूपान्तर की यह प्रक्रिया है। साधक का जीवन भिन्न-भिन्न कोषों-अन्न, प्राण, मन, विज्ञान-आदि को पार करके अन्त में आनन्दमय कोष में प्रवेश करता है। यहां उसको 'अंह ब्रह्मास्मि, तत्वमसि, नेहनानास्ति किंचन, अयमात्मा ब्रह्म' आदि महावाक्यों की प्रतीति अनुभूतिरूप में होने के कारण पर चेतना का साक्षात्कार होता है। इस साक्षात्कार को निर्विकल्प समाधि कहते हैं। इस अवस्था में संकल्प-विकल्प नहीं रहते। केवल ब्रह्म या परब्रह्म का ही अनुभव होता है। 'वासुदेवः सर्वमिति' के भाव या अखण्ड स्थितप्रज्ञता के साथ जीवन की हर क्षण प्रकाशितरूप से प्रकट रहती है। सिद्धदशा प्राप्त होते ही अनेक रिद्धि-सिद्धियां एवं भिन्न-भिन्न प्रकार की शक्तियां साधक को स्वभाविक मिल जाती है।

इस प्रकार के सिद्धसंत चार प्रकार के होते हैं और वे अपने समागम में आनेवाले को भी आत्मदर्शन एवं ब्रह्मदर्शन करवा सकते हैं। हमारी पारस्परिक संबंध अद्वैत और विशिष्टद्वैत के रूप में- Unity in diversity and deversity in unity– और परम चेतना की परात्परता के रूप में आध्यात्मिक अनुभूति के भाव में प्रवेश करता है। जीवनमुक्त दशा और विदेहमुक्त दशा इस प्रकार प्राप्त होती है। इसको नित्यमुक्तों की अवस्था भी कही जाती है। एकान्तिक भक्तों को संतमार्ग से यह अवस्था सारल्य से प्राप्त होती है।

तपश्चर्या से भी साक्षात्कार होता है, किन्तु सच्चे सद्गुरु का प्रसाद न हो तो वैसे सिद्धों और योगीओं को विघ्नों का सामना करना पड़ता है। कभी रिद्धिसिद्धि या ऐश्वर्यप्रताप के प्रदर्शन में वैसे लोग पड़ जाते हैं और प्रतिष्ठाहीन हो जाते हैं। आध्यात्मिक विकास में वापस आने का तो नहीं होता है, किन्तु विकास में रुकावट निश्चत आ जाती है। किन्तु जब परमात्मा और ब्रह्मस्वरूप संत की कृपा और इनके समागम से साक्षात्कार की चरम अवस्था या सम्यक् आत्मप्रतीति या ब्राह्मीस्थिति प्राप्त होती है तब किसी भी प्रकार का विघ्न नहीं आता है। किसी भी प्रकार का विकारी तत्व नहीं रह जाता है। वासना का सम्पूर्ण क्षय होता है और मूल प्रकृति का दिव्यता में रूपान्तर होता है। परिणामस्वरूप साधक की चेतना ब्रह्मदर्शनरूप में या ब्रह्मस्वरूप रूप में परममांगल्यपूर्ण अवस्था प्राप्त करती है। चतुर्थ प्रकार का यह साक्षात्कार ज्ञानसमाधिरूप में–मूल ब्राह्मी स्थिति के रूप में–एक पूर्णयोगी के रूप में या परम एकांतिक स्वरूप में शास्त्रकारों ने गीता में, उपनिषद् में और महाप्रभु स्वामिनारायण ने वचनामृत में स्पष्ट आलेखित किया है। ऐसी परम मांगल्यपूर्ण अवस्था प्राप्त करके जन्मृत्यु के बन्धन से बाहर आना और सहजावस्था का अनुभव करके देह रहते हुए भी भगवान के सुख, शांति और आनंद प्रदान करना और अन्यों को ऐसा ही सुखा, शांति और आनंद प्रदान करना यह ही है जीवन का परम ध्येय। यह ही है सच्ची समाधि या ज्ञानसमाधि।

इसके अतिरिक्त जो अन्य आध्यात्मिक अनुभव होते हैं वे कभी-कभी Transe अवस्था के होते हैं जिन में कभी-कभी साधक को मूर्छा आती है। ये सब भ्रमणायक्त और स्वप्नतुल्य ही होते हैं। सामान्य लोग इनको चमत्कार रूप या miracle के रूप में मानते हैं। ये वास्तव में स्थूल या सूक्ष्म मानसिक भूमिका के मनोवैज्ञानिक अनुभव भी हो सकते हैं। ऐसे अनुभवों के सच्चे आध्यात्मिक अनुभवों की साथ किसी भी प्रकार का संबंध नहीं

है। शक्ति उपासकों को भी रिद्धिसिद्धि के ऐसे बहुत प्रकार के अनुभव होते हैं, किन्तु वे भी आध्यात्मिक अनुभव नहीं हैं। मलिनविद्या या जादू के खेल जैसे वे अनुभव हैं। मन, प्राण, इन्द्रियां एवं देह की एक प्रकार की विशिष्टता से प्राप्त उस-उस तत्व के आभासों और मानसिक ख्यालों को वे लोग आध्यात्मिक अनुभव के रूप में मनवाते हैं। किन्तु इस में किसी न किसी प्रकार की सूक्ष्म वासना या प्रकृति के भावों या मन का आभास बीजरूप में तो रहता ही है। अतः शुद्ध चैतन्य ब्रह्मरूप की प्राप्ति नहीं होती है। सम्यक् ब्रह्मदर्शन की दृष्टि से ये अपूर्ण और मर्यादित होने के कारण जगत में और जीवन में ऐसे योगी अखंडित पूर्णता और कल्याणरीति को समग्र रूप से प्रगट नहीं कर पाते हैं।

जबकि सच्चे संत के समागम में आने से आत्मदर्शन के और ब्रह्मदर्शन के अनुभव होते हैं तब प्रकृति का आमूल रूपांतर होता है और यह रूपांतर की प्रतीति सबको दिव्यजीवन के रूप में स्पष्ट और निश्चित रूप में होती है। ऐसे जीवनमुक्त पुरुष परमात्मा के दास होते हैं, जगत के वे मंत्रदृष्टा है और अन्य जीवनमुक्तों के वे सहभागी होते हैं। हमारे यहां महाप्रभु स्वामिनारायण ने ऐसे ज्योतिर्धरों का प्राकट्य किया और संतप्रणाली का प्रवाह अविरत प्रवहमान रखा। सहजानंदस्वामी की पांचवीं पीढ़ी में हो गये ब्रह्मस्वरूप योगीजी महाराज। वे विरल स्वरूपानुभूति कराने वाले और दिव्यज्ञान की अभिव्यक्ति करने वाले अद्वितीय और अप्रतिम गुणातीतस्वरूप थे। इन्होंने अत्यंत कृपा करके उपर्युक्त परम मांगल्यपूर्ण अवस्था की प्राप्ति के लिए प.पू. स्वामिश्री, प.पू. काकाजी, प.पू. पप्पाजी, प.पू. मंहतस्वामी और प.पू. प्रमुखस्वामी जैसे सन्तों और जीवनमुक्तों द्वारा ब्रह्मशक्ति की अभिव्यक्ति करवाई। इस प्रकार इन्होंने भगवान स्वामिनारायण की संत प्रणालिका को वर्धमान की। यह ही है वास्तव में उनकी जगत को दी गई महान विरासत, जो करुणा और दिव्यप्रेम से परिपूर्ण है।

प.पू. योगीजी महाराज की आज्ञा हुई और प.पू. काकाजी ने संतों और जीवनमुक्तों की सेवा की इतना ही नहीं, किन्तु सन् 1952 में अपना समृद्ध व्यवसाय का त्याग किया, कार्यालय का त्याग किया, हजारों रुपयों का खर्च किया और प्रकट संत के संबंधी श्री नन्दाजी के चुनावकार्य में स्वयं को और अपने परिवार जनों को भी लगा कर उन्हें विजय दिलवाने में निमित्त बने। इस प्रकार अल्पसंबंध था, किन्तु गुरुहरि की आज्ञा थी, अतः इन्होंने अतिशय और अद्‌भुत सेवा की। इस सेवा के फलस्वरूप परम पूज्य योगीजी महाराज ने प.पू. काकाजी को 3 फरवरी 1952 के दिन मांगल्यपूर्ण परम चेतना की अनुभूति 72 घंटे तक गोंडल स्थित अक्षरमंदिर में करवाई। ब्रह्मस्वरूप योगीजी महाराज ने प.पू. काकाजी की चेतना को स्थूल शरीर से मुक्त की और उनको गोलोक, बैकुंठ, बद्रिकाश्रम, श्वेतद्विप जैसी चैतन्यभूमिकाओं का तत्वरूप से दर्शन करवाया, वैविध्यपूर्ण अनुभव करवाया, ब्रह्मपरब्रह्म के दिव्यस्वरूपों की अपरोक्षानुभूति करवाई और अक्षरधाम की परात्परता का स्पष्ट ख्याल देकर गुणातीत भावना अमर है, अखंडित है ऐसा निश्चय दृढ़तापूर्वक करवाया। इसके अतिरिक्त मानवस्वरूप में चैतन्यपूर्ण तत्व जैसे है वैसे ही इनको पहचानना यह ही है 'भक्तपन'—यह ख्याल करवाया। इसकी सम्यक् प्रतीति काकाजी को भावसमाधिरूप स्वरूपानुभूति में निश्चयात्मक

अनुभवरूप से सिद्ध हुई और इसके परिमाम रूप उनकी मृत्यु और महामृत्यु हुई और महाकाल से पर जो अखंड प्रकाशमय सच्चिदानन्दमय ब्रह्म की अनंतता है उसमें उनका प्रवेश हुआ..... चेतना का सामूल रूपांतर हुआ। प.पू. काकाजी की इंद्रियां और अनतःकरण का प्रवाह उस पल से ही अनवरत प्रभुमय हो गया-आचार और विचार में। गुरुहरि योगीजी महाराज के वे चिरंजीव मानसपुत्र बने... परम भागवत संत बन गये। प.पू. काकाजी के साक्षात्कार की विशेषता यह है कि निर्विकल्प समाधि और आत्मदर्शन जिन को होता है उनको भी जो क्षति रह जाती है–वे भी जो अपूर्णता महसूस करते हैं, प.पू. योगीजी महाराज ने इस प्रकार की ज्ञानसमाधि करवा कर नष्ट कर दी और प.पू. काकाजी को अमृतमय बना दिये। उनकी सांसारिक महत्वाकांक्षाएं नष्ट हुई और सच्चे ज्ञानी के सदृश व्यवहार प्रारंभ हो गया। काल, कर्म, माया, प्रकृति और स्वभाव से पर ऐसे दिव्य जीवन की परम मांगल्यपूर्ण, स्वरूपतादात्म्ययुक्त, आध्यात्मिक विनम्रता युक्त निश्चिंतता प्राप्त हुई और दृष्टा, दृश्य और दर्शन साध्य, साधन और साधना एक हो गई। अविरोधवृत्ति और अभेददृष्टि में जागृत और आत्मा में परमात्मा का अखंड संबंध की, सम्यक् दर्शन सम्यक् ज्ञान और सम्यक् चारित्र्य की भूमिका में वे स्थित हो गये। प.पू. योगीजी महाराज ने इस तथ्य को तीन बार भिन्न-भिन्न प्रसंगों में अपनी डायरी में लिखा है और बारबार अपने प्रवचनों में कहा भी है जो बहुतों ने सुनी है। प.पू. काकाजी के जीवन द्वारा तो सदैव इसकी प्रतीति हो रही है। हर व्यक्ति के लिए उनके सूर्यसदृश हृदय से दया और करुणा का अखंड प्रवाह प्रवहमान हो रहा है। यह प्रवाह भी क्षीण हुआ दिखाई नहीं पड़ा। इनको किसी से किसी भी प्रकार की अपेक्षा नहीं है न वे किसी की उपेक्षा करते हैं। इनके संपर्क में आई हुई व्यक्ति किसी भी प्रकार की स्वभाव-प्रकृति की हो, काकाजी इसके साथ समरस हो जाते हैं। अपने सर्वस्व का सर्वभाव से त्याग करके पुराने और नये अनेक गृहस्थी, युवक, भाई-बहन और संतों–ये सब के जीवन में एकांतिकी स्थिति स्थित करके जो महान परिवर्तन इन्होंने करवाया है, वास्तव में समग्र सत्संगसमाज प.पू. काकाजी का सदैव कृतज्ञ रहेगा। हां, काकाजी तो इसका थोड़ा भी ख्याल नहीं करते, वे तो इतना ही देखते हैं–'आप परमात्मा के अल्प संबंध में भी हो? आपने जो किया वह सब दिव्य.... ।' किसी को प.पू. काकाजी ने खूब संभाला हो, कितना ही उसका श्रेय किया हो और वह भी अगर काकाजी की उपेक्षा करता है तब भी इसकी और काकाजी की दृष्टि जाती ही नहीं है। वास्तव में यह उनकी ताकत और शक्ति कोई विशिष्ट प्रकार की है। वे कभी किसी के स्वभाव या प्रकृति की ओर देखते ही नहीं है। सब को अपार करुणा के प्रवाह में वे सदैव स्नान करवाते रहे हैं। अतः वे अति समर्थ होते हुए भी एक सामान्य मनुष्य के समान कष्ट सहन करके दिव्य करुणा और प्रेम प्रदर्शित करते रहे हैं। प.पू. काकाजी ने प.पू. योगीजी महाराज का सेवन सचमुच किया है, अतः वे निश्चिंतता से निर्लेपता में ऐसे अखंड आनंद में रहते हैं और जहां कहीं वे जाते हैं वहां आनंद सहज ही प्रकट होता है। इस प्रकार अखंड वर्तमान में ही-महाकाल से ऊपर उठ कर एक ऐसी भूमिका में वे रहते हैं कि इनका सारा समय हरिमय, हरिप्रेरित भगवान के कार्य में ही व्यतीत होता है। पू. काकाजी का कैसा दिव्य जीवन है और उनके सान्निध्य में कैसे दिव्य परिमल प्रसूत होती है इसका तो सबको अनुभव है ही। इससे अतिरिक्त पू. काकाजी के दिव्यगुण-शौर्य, अभय, निश्चिंतता, नम्रता, समत्व, सारल्य,

निरपेक्षता, समग्र के प्रति प्रेम सेवा और भक्तिभाव आदि का भी अनुभव इनके परिचय में आनेवाले सबको है। इनके अनुग्रह से अनेक संतों, युवकों, बहनों और अन्यान्य साधकों ने मन के संकल्प-विकल्प विलीन करके निर्विकल्प समाधि के जो सुख, शांति और आनंद प्राप्त किये हैं, यह ही है, प्रतीति पू. काकाजी के ब्रह्मसाक्षात्कार की। जिनके संपर्क में आने से–

1. अहंकार का विसर्जन होता है,
2. नैमिषारण्य क्षेत्र का अनुभव होता है,
3. जीवन का उर्ध्वगमन हो रहा और दिव्यगुणों का विकास होता है,
4. जीवात्मा जागृत होकर पारमार्थिक सत्ता में प्रविष्ट होकर ब्रह्मरूप होता है और परब्रह्म के साथ जुड़ जाता है।

– यह ही है हमारी प्रतीति, यह ही है फलश्रुति प.पू. काकाजी जैसे अध्यात्मयोगी के ब्रह्म साक्षात्कार की। लगता है यहीं कार्य कर रही है परमात्मा की दिव्यशक्ति। वास्तव में यह है गुणातीत अवस्था का लक्षण।

संसार को आवश्यक है, संसार के लिये अनिवार्य है ऐसे अध्यात्म पुरुष जिनको स्वरूपानुभूति हुई है, जिनको सम्यक् दर्शन हुआ है। ऐसे पुरुष को हम विभूतिपुरुष–सदा दिव्य साकार स्वरूप भी कह सकते हैं।

3 फरवरी 1952 के दिन प.पू. योगीजी महाराज ने पू. काकाजी को आत्मा-परमात्मा, ब्रह्म-परब्रह्म के दिव्यस्वरूप की अपरोक्षानुभूति कहो या ब्रह्मनिर्वाण की प्रतीति कहो या ज्ञान समाधि कहो–यह जो करवाई यह एक महान क्रान्तिमय घटना है..... एक नूतनयुग का प्रादुर्भाव है। क्यों?–प.पू. काकाजी ने समाधि के समय वहां अक्षरधाम में परम दिव्य चेतना के समीप ही संकल्प किया था कि मुझे अकेले को नहीं, किन्तु मेरे समाज - मेरे सम्बन्ध में आये हुए सबको ऐसी ही दिव्य अनुभूति हो। इस प्रकार तीन फरवरी से नया मुक्तियुग का प्रारम्भ हुआ..... इस पुरुष के यह संकल्प से चार पंखुड़ी (संतों, युवको, गृहस्थों और बहनों) युक्त एक कमल खिल उठा... एक ब्रह्मनियंत्रित समाज की रचना हुई। अतः हमें निश्चय होना चाहिए कि हमारे में एक महापुरुष का संकल्प क्रियान्वित हो रहा है। वास्तव में यह ही हमारा परम सौभाग्य है। अतः इस स्वरूपानुभूतिदिन को हमें परम मांगल्यपूर्ण मान कर, प.पू. काकाजी का समागम करके इनकी कृपा का पात्र बन कर, हमारे जीवन को धन्य बना कर परमात्मा के मिलन के इस प्रकार के साक्षात्कार की अभीप्सा रखें। हृदय खोल कर प्रमाणिक रूप से अंतर से हम तीव्र पुकार करें और अक्षरधामरूप बन कर महाराज की दिव्यमूर्ति के सुख, शांति और आनंद प्राप्त करें यह ही है इस महामांगल्यपूर्ण अवसर पर गुरुचरण में हमारी प्रार्थना।

❋ ❋ ❋

श्रद्धा-विश्वास अनुभव पर आधारित नहीं है। यह एक ऐसी चीज है जो अनुभव के पूर्व ही होती है।

– श्री अरविंद

'भगवत्कृपा–**The Divine Grace**' सत्संगपत्रिका द्वितीय वर्ष में प्रवेश कर रही है और आप के सहकार एवं उदार संरक्षण से आगे बढ़ने में जो बल प्राप्त हुआ है, इसलिये हम आपको धन्यवाद देते हैं। नये वर्ष में आपकी पत्रिका नया स्वरूप और विशेष शुल्क (वार्षिक रु. 15.00) के साथ आपके पास पहुंचेगी। आशा है, आप पूर्ववत उसका स्वागत करेंगे।

-सहसम्पादक

Divine Consciousness or Brahmic Consciousness

There have been two divergent and at the same time parallel thinking processes so far developed by the superintelligence, namely :

1. Purely materialistic view of life of the universe and the creation or the creator.

2. The another entirely divergent view, where it is purely spiritual based on the fundamental assumption of the creator-the supreme divine entity or the supreme reality by whose power and inspiration and sankalpa[1] the innumerable universes come into existence, they develop and extinguish in the process of creation, development and dissolution worked out through Brahma[2] Vishnu[3], Shiva[4], or creative energy, its development and its dissolution. The original prime ordeal power transcends all the three entities and completes the cycle.

This spiritualistic view of life – of universe and the creator–accepts the materialistic view as an equally important division of the one entity and this axiom is approved generally by all the religions. According to shuddha Vedanta[5] principle acceptable by all is 'unity in diversity and diversity in unity, unity, but not uniformity' and still the supremental transcends both the aspects, which is advocated in Gita as 'aksharat parataha para' known as 'purushottam.' This discription of the three divine entities kshara, Akshara and Purshottam principle emphasised or advocated for the final liberation or emancipation of the soul, just as it happened in the last shloka[1] of the last chapter of Gita where pure righteosness triumphed and the conficts, the chaos and the tensions have permanently ended. This is the real essence of spiritualism. It is the realisation of Sacchidananda or Brahmic Consciousness or divine consciousness. This is the final ultimate spiritual relationship of Jiva[2] and Shiva[3] becoming into shiva-shakti, Laxmi Narayana, Nara-Narayana or Akshar-purushottam swaroopa, Purushottam still transcending into the totality of the truth, knowledge and bliss consciousness. Brahman is purna, sacchidananda[4] but Para-Brahman-Parmatma[5] is sampurna It is concerned with the totality and the infinitness. But that ultimate reality has to manifest in one form or another as human being to impart the eternal knowledge of the divine entity & the original creation. Therefore Rama Krishna, Buddha, Mahavir, Nank, Swami Ramdas, Shri Ramakrishna manifested and ultimately finally Lord Swaminarayan manifesting on this earth in human form to liberate from the vicious desires ego sense the ingnorant and bonded souls govened by crude nature.

---

1. determination, 2. the creator God, 3. the preserver God, 4. The distroyer God. 5. the non dual philosophy of the upanishads

---

1. Verse, 2. An embodied Soul; one in bondage, 3. God. 4. name of Brahman with attributes of Existence-Consciousness-Bliss, 5. Suprme Transcendental Eternal Reality.

Thus, we experience various levels of consciousness. But according to scriputres and holy books five sorts of bodies have been enumerted and described by Shri Aurobindo and other spiritual masters as panch koshas for five bodies viz.

1. The physical body,
2. The subtle body or vital body,
3. The mental body,
4. The dynamic illuminated and awakened body and
5. The emancipated sacchidananda Brahmic body known as Videhi-Mukta[1] fully enjoying the eternal bliss.

Lord Swaminarayan gave the highest boon in the form of continuous manifestation of the divinity as Brahmaswaroop[2] Saints through whom one can experience and realise the supreme reality or Sacchidanand swaroopa and attain the unattainable or the divine consciousness in this life.

But consciousness of what? The consciousness is ours. Animal are the living entities but are not conscious of themselves or of the working of the creator. Their entire life is base on emotions and instincts. Man has intelligence i.e. the brain and also the heart i.e. emotions, instincts and sentiments. To spirit or the soul has one added attribute of illumination and understanding of the creative process. This can only be revealed through the realised souls or an Avatar.[3]

1. One who is totally liberated in this very body in this very life. 2. The Soul that has attained equivalence and idenification with Brahman. 3. Descent or incarantion of God.

Consciousness has a force of penetration and absorption with three main inherent attributes of permeting illumination, right understanding with joy & power and existential awarness. When it becomes pure and contentless or attributeless then it is Sacchidanand Swaroopa or konwn as Nirvikalpa Samadhi.[1] But it has to be active and there the divine consciousness has to be attached by God's grace, which automatically comes to those who are really fit for it or competent for it or intensly aspire for it with indomitable faith, surrender and devotion for the eternal truth.

Hence, an aspirant has to be conscious of such Avatar or the realised souls and remain in his company or in his association with open mind or an innocent heart to surrender and dedicated his life for the Supreme realisation by the Grace of God-the creator or his manifested realised holy saints. Human beings have their own understandings and awareness according to their own limited knowledge, power and their own efforts. Their experieness are also limited which are based from unknown to the known. But the Supreme reality still remains unknowable and unattainable. Lord Krishna, therefore, taught Adhyatma yoga[2], to Brahma and the knowledge of eternity or the ceator has been imparted by God through those who could digest it and transmit it to the real seekers of truth. We have therefore, to remain constantly aware

1. The highest State of Samadhi in which the aspirant realises his total oneness with Brahman, but his existential awareness reanaubs, 2. One of the various kinds of yogas especially related with spirituality.

and awakened inwardly for receiving this sort of inspiration from the invisble and yet visible, so that from the pure contentless consciousness (Nirvikalpa Samadhi) the liberated soul becomes illuminated and emancipated and attain the Brahmic consciousness or the divine consciousness in this vary life. There is another also equally important process of awakening the serpant power or kundalini by number of ways and means.

3rd February is the most auspicious day when in Aurobindo Ashram mother had the distinct revelation of the supramental conciousness. **By Gurudeo Yogiji Maharaj's grace it has happened in another incident also.**

There are realised souls in our country and one should try to surrender honestly, sincerely & completely and dedicate their life to such supremely realised souls for experiencing and realising the Brahmic coneciousness or the divine consciousness. May God bless us all with His infinite love, power and grace for self and supreme realisation.

We have a center in Delhi at Ashok Vihar at Sokhada, Vidynagar, Sankarda, Ahmedabad in Gujarat, at Tardeo in Bombay, London, Chicago and at such other places. Number of such cultural and spiritual centres will be opened in the near future and you can be a participant or a partner in the holiy working of this fellowship of Gunatit Jnyan.

'Friendliness is much more powerful than love, because in the end it reaults into Godliness with divine vision. By God's grace let the kingdom of heaven be within us and also without and beyond.'

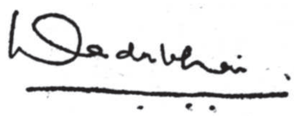

व्रतोत्सवसूची

1.	दि.	17.1.78	मंगलवार	नवमी, श्री स्वामिनारायण जयंती
2.	दि.	19.1.78	गुरुवार	पुत्रदा एकादशी, उपवास
3.	दि.	24.1.78	मंगलवार	मूल अक्षरमूर्ति गुणातीतानंदस्वामिजी का दीक्षा दिन
4.	दि.	26.1.78	गुरुवार	भारतीय प्रजासत्ताक दिन
5.	दि.	3.2.78	शुक्रवार	प.पू. काकाजी का स्वरूपानुभूति दिन
6.	दि.	4.2.78	शनिवार	भागवत एकादशी, ब्रह्मस्वरूप स्वामिश्री योगीजी महाराज का स्वधामगमन
7.	दि.	12.2.78	रविवार	वसंतपंचमी, श्री शिक्षापत्री जयंती, ब्रह्मस्वरूप स्वामिश्री शास्त्रीजी महाराज का प्राकट्य दिन

साधु मुकुंदजीवनदास गुरु ज्ञानजीवनदास जी द्वारा योगी डिवाईन सोसाईटी,
ए-103, अशोक विहार-III, दिल्ली-110052 फोनः 518838
मुद्रण स्थानः ठक्कर प्रिंटिंग प्रेस, 2588, बस्ती पंजाबियान, सब्जी मण्डी, दिल्ली-110007